Research Paper

Volume : 4 | Issue : 8 | Aug 2015 • ISSN No 2277 - 8179

भूमंडलीकरण और हिन्दी उपन्यास साहित्य

HINDI

KEYWORDS : भूमंडलीकरण,उपन्यास

ROSHAN KUMAR

ABSTRACT

भूमंडलीकरण शब्द 'ग्लोबलाइजेशन'(Globalization)का हिन्दी रूपांतरण है। समकालीन भूमंडलीकरण किसी ऐतिहासिक प्रक्रिया का स्वाभाविक विकास नहीं समझी जा सकती । 21वीं सदी वाले भूमंडलीकरण की जड़े हजारों वर्ष पहले नहीं तलाशी जा सकती है। आज जिस संदर्भ में भूमंडलीकरण की चर्चा है वह अमेरिकी पूंजीवाद से अभिन्न रूप जुड़ी हुई है। भौगोलिक सीमा के समाप्त होने, घरेलू बाजारों को नियंत्रण मुक्त किये जाने और विज्ञान और टेक्नोलॉजी की सहायता से आज विश्व 'ग्लोबल विलेज' में परिवर्तित हो गया है। है। भूमंडलीकरण ने हमारे आर्थिक जगत को प्रभावित करने के साथ ही सामाजिक, सांस्कृतिक, राजीनीतिक, साहित्यिक जगत को भी प्रभावित किया है। हिन्दी साहित्य-जगत् में लगभग पिछले दो दशकों से भूमंडलीकरण पर चर्चा हो रही है, किन्तु उस यथार्थ को सशक्त प्रभावीशाली और मार्मिक रूप में अभिव्यक्ति देने का श्रेय जाता है, रेहन पर रग्घू (काशीनाथ सिह) दौड़ (ममता कालिया) एक ब्रेक के बाद (अलका सरावगी) विसर्जन (राजु शर्मा), ग्लोबल गाँव के देवता (रणेंद्र), उधर के लोग (अजय नावरिया), मुन्नी मोबाईल (प्रदीप सौरभ) आदि उपन्यासों को।

प्रस्तावना -

अंग्रेजी के 'ग्लोबलाइजेशन' (Globalization)शब्द के लिए हिन्दी में 'भूमंडलीकरण' शब्द प्रचलित है। इसके लिए 'वैश्वीकरण' शब्द भी प्रयुक्त होता है। भूमंडलीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करने से पूर्व इसके शाब्दिक अर्थ को जानना आवश्यक है। 'भूमंडलीकरण' शब्द में 'भू' का अर्थ होता है -'भूमि' और 'मंडलीकरण' का अर्थ हुआ - समाहित करना। अर्थात् संपूर्ण भूमंडल का एक साथ हो जाना। यह शब्द बीसवीं सदी के अंतिम दशक में व्यापक रूप में प्रयोग में आया। 1991 में सोवियतसंघ के विघटन के बाद जब दुनिया एक ध्रुवीय हो गयी और अमेरिका के नेतृत्व में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने दुनिया के, खासतौर पर तीसरी दुनिया के बाजार पर कब्जा जमाना शुरू किया तो इसे 'भूमंडलीकरण' का नाम दिया गया। इस शब्द से यह भ्रम पैदा होता है कि यह ऐसी व्यवस्था है, जिसमें अपने छोटे स्वार्थों से ऊपर उठकर लोग,सारे संसार के मंगल के लिए जुड़ जायेगे। लेकिन भूमंडलीकरण के निहितार्थ इसके ठीक उलटा है। यह व्यवस्था सारे संसार को कुछ सशक्त पूंजीवादी प्रतिष्ठानों ,यानी बहुराष्ट्रीय कंपनियों और उनके संकेंद्रण के सबसे सबल केंद्र अमेरिका के हितों की रक्षा का माध्यम बनी हुई है। संसार को एक करने की इसकी दृष्टि पूरी तरह एक आयामी है। यह सिर्फ व्यापार के लिए दुनिया को एक करना चाहती है , बाकी सारे बातें आनुषंगिक है।

समकालीन भूमंडलीकरण की अवधारणा किसी ऐतिहासिक प्रकिया का स्वाभाविक विकास नहीं समझी जा सकती । भले ही कुछ विद्वान ऐसा प्रयत्न करते रहे है। 21वीं सदी वाले भूमंडलीकरण की जड़े हजारों वर्ष पहले नहीं तलाशी जा सकती है। आज जिस संदर्भ में भूमंडलीकरण की चर्चा गर्म हुई है वह अमेरिकी पूंजीवाद, पश्चिमी जनतंत्र वाली प्रणाली के साथ अभिन्न रूप से जुडी है। वैसे तो इस जादू के पिटारे को खोलते समय इस बात की तथाकथित घोषणा की गयी थी कि इस प्रक्रिया के तहत वैश्विक रूप से असमानता में कमी आयेगी।यह संसार में शिक्षा, रोजगार तथा व्यापार को मजबूती प्रदान करेगा और आपसी सहभागिता बनेगी, पर वर्तमान परिदृश्य पर दृष्टपात करें तो यह दावा पूर्णतया खोखला और दोहरा चरित्र का निर्माण करने जैसा है। प्रख्यात वैज्ञानिक प्रो. यशपाल भी भूमंडलीकरण की अपसंस्कृतिकरण से चिंतित नजर आते हैं उनका मानना है कि "भूमंडलीकरण का अर्थ यह नहीं है कि यह सब लोगों के लिए बराबर है। इसमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसी बात बिल्कुल नहीं है।भूमंडलीकरण एक स्वेच्छाकारी प्रक्रिया है जिसके नियमों का पालन हमें करना पड़ेगा और हम सबको उसके पीछे चलना पड़ेगा। ये यह भी तय करेंगी कि हमारी स्थितियाँ कैसी होगी। उन्हें कैसे होनी चाहिए। आपको अनुकूलित किया जाए।"[1] भौगोलिक सीमाओं के समाप्त होने,घरेलु बाजारों को नियंत्रण मुक्त किये जाने और विज्ञान और संचार टेक्नोलॉजी के चमत्कारी आविष्कारों ने विश्व के छोटे बड़े राज्यों को आपस में इस तरह गूंथ -जोड़ दिया है कि विश्व 'ग्लोबल विलेज' में परिवर्तित हो गया है। भूमंडलीकरण ने हमारे आर्थिक जगत को प्रभावित करने के साथ ही सामाजिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजीनीतिक, साहित्यिक जगत को भी प्रभावित किया है।

हिन्दी साहित्य-जगत् में लगभग पिछले दो दशकों से भूमंडलीकरण पर चर्चा हो रही है, किन्तु उस यथार्थ को सशक्त प्रभावीशाली और मार्मिक रूप में अभिव्यक्ति देने का श्रेय जाता है, रेहन पर रग्घू (काशीनाथ सिह) दौड़ (ममता कालिया) एक ब्रेक के बाद (अलका सरावगी) विसर्जन (राजु शर्मा), ग्लोबल गाँव के देवता (रणेंद्र), उधर के लोग (अजय नावरिया), मुन्नी मोबाईल (प्रदीप सौरभ) आदि उपन्यासों को।

'रेहन पर रग्घू' प्रख्यात कथाकार काशीनाथ सिह की अत्यन्त सशक्त औपन्यासिक कृति है। भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप संवेदना,सम्बन्ध और सामूहिक दुनिया में जो निर्मम ध्वस हुआ है - बदलाव का जो तूफान आया है -उसका प्रमाणिक और गहन अँकन है ,रेहन पर रग्घू। यह उपन्यास वस्तुत: गाँव शहर अमेरिका तक के भूगोल में फैला हुआ अकेले और निहित्थे पड़ते जा रहे समकालीन मनुष्य का बेजोड़ आख्यान है। इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने सर्वाधिक गहरा घाव भावनात्मक स्तर पर किया है। आज व्यक्ति और समाज मानवीय भावबोध से निरंतर दूर होता जा रहा है। उपन्यास का नायक रघुनाथ के इस कथन में इसकी अनुगुंज बहुत साफ सुनी जा सकती है, "देखों जग्गन परायों में अपने मिल जाते है ,लेकिन अपनों में नहीं मिलते ऐसा नहीं है कि अपने नहीं थे- थे लेकिन तब जब समाज था,परिवार थे रिश्ते-नाते थे, भावना थी। भावना यह थी कि यह भाई है,यह भतीजा है, भतीजी है,यह कक्का यह काकी है, यह बुआ है, मामी है।भावना में कमी होती थी तो उसे पूरा कर देती थी लोक-लाज कि यह ऐसा नहीं करेंगे तो लोग क्या कहेंगे? धुरी भावना थी , गणित नहीं, लेन-देन नहीं।"2 हमारी संयुक्त परिवार पहले ही टूट कर बिखर चुकी है और भूमंडलीकरण से समाज का एक बड़ा हिस्सा वृद्धों को विस्थापित एवं उपेक्षित जीवन जीने को बाध्य कर दिया है। रघुनाथ की यात्रा बनारस के समीपवर्ती गाँव पहाड़पूर से शुरू होकर बनारस में नई बनी कॉलोनी अशोक विहार तक की है ,तो उसके बेटों की यात्रा नोएडा और अमेरिका तक की । अपने बेटों का गाँव,गाँव की जमीन से उपराम होना रघुनाथ को भीतर तक सालता है। उनकी पीड़ा इन शब्दों में व्यक्त होती है - "शीला हमारे तीन बच्चे है ,लेकिन पता नहीं क्यों कभी मेरे भीतर एक ऐसी हूक उठती है , जैसे लगता है मेरी औरत बाँझ है और मैं निस्संतान पिता हूँ।"3

अलका सरावगी ने 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास के विषय का ताना-बाना समसामायिक कोर्पोरेट जगत को कथावस्तु का आधार लेते हुए बुना है । यह कोर्पोरेट जगत की वैचारिकता और धोखाधड़ी को प्रस्तुत करता है उपन्यास में कोर्पोरेट जगत की चकाचौध के बीच देश की एक तिहाई जनता को 'कुत्ते' की तरह जिंदगी बिताते हुए दिखाया है, जो देश की सबसे बड़ी विडम्बना है, जबकि कोर्पोरेट वर्ल्ड का मानना है कि 'ट्रिकिल डाउन इफेक्ट' के अनुसार अंततः इस विकास का

लाभ उस जनता को ही पहुँचेगा । मार्केटिंग में उच्च पद पर स्थिति एक्जीक्यूटिव को प्रमुख चरित्रों के रूप में प्रस्तुत करते हुए सरावगी ने उपन्यास की विषयवस्तु उत्तर आधुनिक उपभोक्तावादी व्यक्ति से जोडी है । के.वी., गुरुचरण उर्फ गुरु और भट्ट ऐसे ही चरित्र हैं जो ग्लोबलाइजेशन के इस समय में ग्लोबल सपनों को बेचते हैं । यह सपने मध्यवर्गीय समाज पर हावी हो रहे हैं और देश की तीस करोड़ निम्न-मध्यवर्गीय जनता का जीवन इन सपनों को प्राप्त करने के सपनों में ही समाप्त हो जाता है । सपनों की आभासी दुनिया (वर्चुअल वर्ल्ड) का सच सामने आता है जब ग्लोबल और आंतरिक सपनों की टकराहट होती है।'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास कोर्पोरेट जगत के चरित्रों को अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत करता है तथा पाठक के सामने एक नवीन कथ्य को लेकर आता है। वहीं दूसरी तरफ बाज़ारवाद व्यक्ति को केवल एक वस्तु के रूप में देखता है, जो मात्र अपना उत्पाद बेचने से मतलब रखता है । मानवीय संवेदना किस प्रकार वस्तुवादी दृष्टि में परिवर्तित हो रही है उसका एक दस्तावेज बनकर यह उपन्यास पाठक के सामने आता है । हर छह महीने में नये शहर में नई नौकरी के लिए भटक रहे उपन्यास के चरित्र 'असंगतपूर्ण संगति' की उत्तर-आधुनिक स्थिति को ही प्रस्तुत करते हैं । गुरु का रहस्यमय जीवन उपन्यास के अन्य पात्रों में जिज्ञासा और भ्रम का मायाजाल बनाते हैं जिसमें विचारधाराएँ स्वाहा हो जाती है और महावृत्तांतों को करारी चोट मिलती है । ईर्ष्या मुक्त प्रेम में किसी तीसरे का सहज स्वीकार करते हुए प्रेम का जो रूप इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है वह न केवल प्रेम की परंपरावादी विचारधाराओं से मुक्ति दिलाता है बल्कि नारीवादी विमर्श को भी प्रस्तुत करते हुए नारी की पूर्ण स्वतंत्रता की घोषणा भी करता है ।

'दौड़' हिन्दी का ऐसा एक उपन्यास है, जो कलेवर में छोटा-88 पन्ने की यह लघु उपन्यास हमारे समक्ष कुछ मज़बूत समस्याओं और सवालों को उपस्थित करते हैं। भूमंडलीकरण ,उदारीकण और निजीकरण ने 21वीं सदी में युवाओं के सामने सपनों की एक अलग और नितांत नई दुनिया का द्वार खोला दिया है जिसके चलते कई नए ढंग के रोजगार और नौकरियाँ उपलब्ध हो गई है।बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने रोजगार के नए अवसर प्रदान करने के साथ-साथ बाजारतंत्र और उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है। युवाओं ने इस नए दौर में नए तंत्र पर सवार होकर सफलता तो खूब अर्जित की है पर मानवीय सम्बन्ध और आपसी रिश्तें इनसे कहीं छूटकर बहुत दूर चले गये है। पवन, सघन, अभिषेक और स्टैला इसी वैश्वीकरण के दौर के बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से जुड़े हुए पात्र है। पवन के माता पिता दो पुत्र होते हुए भी बुढापे में अकेले जीने को अभिशिप्त है। हताश और निराश माता पिता के ये उद्गार मन को कचोटे बिना नहीं रहते , "ऐसा ही पता होता तो पच्चीस बरस पहले परिवार नियोजन क्यों करते। होने देते चार-छह बच्चे।एक न एक तो पास रहता।" 4 वैश्वीकरण की एक उपज उपभोक्तावादी संस्कृति है। जिसमें हमारी संस्कृति के लिए कोई स्थान नहीं है। पवन माता पिता से कहता है , "पापा मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है कैरियर है। .....मैं ऐसे शहर में रहना चाहता हूँ जहाँ कल्चर नहीं कैज़ुयूमर हो। मुझे संस्कृति नहीं ,उपभोक्ता संस्कृति चाहिए तभी मैं कामयाब रहूँगा।"5

रणेन्द्र ने अपने उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' में एक ऐसे समाज को केंद्र बिंदु माना है जो आज के दौर का सर्वाधिक शोषित समाज है- आदिवासी समाज। विस्थापन की त्रासदी भूमंडलीरण का एक परिणाम है। विस्थापन की प्रक्रिया से किसी समाज का केवल भौगोलिक परिवर्तन ही नहीं होता, बल्कि उसके साथ ही उस समाज का सांस्कृतिक एवं चेतनागत स्वरूप का भी आमूलचूल परिवर्तन होता है। लेखक ने 'असुर जनजाति' की संघर्ष गाथा के माध्यम से दुनिया के अनेक भागों में फैले हुए आदिवासियों के संघर्ष की पड़ताल की है। मसलन अमेरिकी महाद्वीप में इंका, माया,और सैकड़ो 'रेड इण्डियन' की मूक हत्याएँ भी झारखण्ड असूरों के संघर्ष से अलग नहीं है क्योंकि उन्हें भी आधुनिकता के ठेकेदारों ने असहिष्णु और बर्बर कहकर कुछ इसी तरह मौत के घाट उतारा था।

मुन्नी मोबाइल' प्रदीप सौरभ की लिखी हुई उपन्यास है। आनंद भारती उपन्यास का एक मुख्य पात्र है जो एक पत्रकार है और जिसकी पैनी, खोजी और निर्भीक कलम देश, समाज के घटित को शब्दबद्ध करती चली जा रही है। उपन्यास के केंद्र में 'मुन्नी मोबाइल' की कथा है। मुन्नी मोबाइल, जिसके लिए उपन्यासकार शुरू में ही कह देता है, "जो पढ़ी नहीं है लेकिन कढ़ी फुल-फुल है"6, जो आनंद भारती के यहाँ झाड़ू-पोंछा करती है और जिसे वह किसी तरह हस्ताक्षर करना सिखिलाता है।" मुन्नी मोबाइल, जिसका असली नाम बिंदू यादव है, वह बिहार के बक्सर जिले से आकर दिल्ली के समीपवर्ती उपनगर के एक गाँव में रहती है। क्रमशः ऊपर की सीढ़ियाँ चढ़ती और भटकती, हर तरह के दाँव-पेच में वह माहिर होने लगती है और प्रभुतासंपन्न स्थानीय ठेकेदारों, रंगदारों, पुलिस थानों से लड़ती-झगड़ती, तरह-तरह की सांघातिक स्थितियों को सहती, उनकी काट सोचती कई बसों की मालकिन बन जाती है और चौंधराइन की संज्ञा पाती है। उपन्यास के ये पात्र जिस उपभोगपरस्त ग्लैमर और विलासिता के मारक, आकर्षक, अर्थप्रधान देशकाल में जी रहे हैं, वहाँ रास्तों, फैसलों के सही गलत, नैतिक-अनैतिक होने पर सोचने की फुरसत, किसी को नहीं है। बस आगे दौड़ते चले जाना ही यहाँ जीवन की एकमात्र मंशा है ।

REFERENCE

1. प्रो. यशपाल उद्धृत अक्षर पर्व ,मार्च 2004 | 2 .रेहन पर रग्घू - काशीनाथ सिंह | 3.रेहन पर रग्घू - काशीनाथ सिंह | 4. दौड़- ममता कालिया | 5. दौड़- ममता कालिया | 6. मुन्नी मोबाइल - प्रदीप सौरभ